49768 - उस बुज़ुर्ग व्यक्ति का हुक्म जो रोज़ा रखने में असमर्थ है

प्रश्न

मेरी माँ बहुत बूढ़ी हैं। वह पिछले साल बहुत बीमार हो गई थीं और केवल दस दिनों के रोज़े रख सकी थीं। ज्ञात रहे कि वह बहुत कमज़ोर हैं और रोज़ा सहन नहीं कर सकती हैं। मेरा सवाल यह है कि : मैं उनकी ओर से उन दिनों की क़ज़ा कैसे करूँ, जिनके रोज़े वह नहीं रख सकी थीं?

विस्तृत उत्तर

हर प्रकार की प्रशंसा और गुणगान केवल अल्लाह तआला के लिए योग्य है।.

यदि वह बीमारी के कारण रोज़ा नहीं रख सकी थीं, और आशा है कि वह ठीक हो जाएँगी और बाद में रोज़ा रखने में सक्षम हो जाएँगी, तो उनके लिए उन दिनों की क़ज़ा करना अनिवार्य है, जिनके वह रमज़ान में रोज़ा नहीं रख सकी थीं। क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है :

وَمَنْ كَانَ مَرِيضاً أَوْ عَلَى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ أَيَّامٍ أُخَرَ [البقرة : 185].

“और जो बीमार हो या यात्रा पर हो तो वह दूसरे दिनों में उसकी गिनती पूरी करे।” (सूरतुल बक़रा : 185)

लेकिन अगर वह रोज़ा रखने में सक्षम नहीं थीं और इस बात की कोई आशा नहीं है कि वह बीमारी या बुढ़ापे के कारण भविष्य में रोज़ा रख पाएँगी, तो ऐसी स्थिति में उनपर रोज़ा रखना अनिवार्य नहीं है, बल्कि उन्हें हर दिन के बदले एक ग़रीब व्यक्ति को खाना खिलाना होगा।

इसका प्रमाण वह हदीस है जिसे अबू दाऊद (हदीस संख्या : 2318) ने इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से अल्लाह तआला के इस फरमान के बारे में रिवायत किया है :

وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ [البقرة : 185]

और जो लोग (कठिनाई से) इसकी ताक़त रखते हैं (औ रोज़ा न रखें), तो उनके ऊपर फ़िदया (छुड़ौती) में एक निर्धन को खाना खिलाना है।” (सूरतुल बक़रा : 184)

(इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा ने) कहा : बूढ़े (वृद्ध) पुरूष और बूढ़ी महिला के लिए रुख़्सत (रियायत) थी, जबकि वे (कठिनाई के साथ) रोज़ा रखने की ताक़त रखते हैं, कि वे रोज़ा न रखें और हर दिन के बदले एक मिस्कीन (ग़रीब व्यक्ति) को खाना खिलाएँ।"

नववी ने कहा : इसकी इस्नाद हसन (अच्छी) है।" उद्धरण समाप्त हुआ।

नववी ने "अल-मजमू" (6/262) में कहा :

"शाफ़ेई और उनके साथियों ने कहा : वह बूढ़ा व्यक्ति जिसे रोज़ा निढाल कर देता है, अर्थात् उसकी वजह से उसे अत्यधिक कष्ट पहुँचता है। तथा वह बीमार व्यक्ति जिसके ठीक होने की कोई उम्मीद नहीं है, तो इन दोनों पर बिना किसी मतभेद के रोज़ा रखना अनिवार्य नहीं है। तथा इब्नुल-मुंज़िर ने इसके बारे में सर्वसम्मति का उल्लेख किया है। लेकिन विद्वानों के दो कथनों में से सबसे सही कथन के अनुसार उन दोनों पर फ़िद्या (हर दिन के बदले एक ग़रीब व्यक्ति को खाना खिलाना) अनिवार्य है।"उद्धरण समाप्त हुआ।

शैख़ इब्ने बाज़ रहिमहुल्लाह से "मजमूउल-फ़तावा" (15/203) में पूछा गया :

एक बूढ़ी महिला है, जो रोज़ा रखने में असमर्थ है, तो उसे क्या करना चाहिए ?

तो उन्होंने जवाब दिया :

"उसपर प्रत्येक दिन के बदले एक ग़रीब व्यक्ति को शहर के मुख्य भोजन से आधा 'साअ' खाना खिलाना अनिवार्य है, चाहे वह खजूर हो, या चावल हो, या कुछ और। और वज़न से उसकी मात्रा लगभग डेढ़ किलोग्राम होती है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सहाबा (साथियों) के एक समूह ने, जिनमें इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा भी शामिल हैं, इसका फ़तवा दिया है। अगर वह इतनी ग़रीब है कि खाना खिलाने में सक्षम नहीं है, तो उसपर कुछ भी करना अनिवार्य नहीं है। इस कफ़्फ़ारह (प्रायश्चित) का भुगतान महीने की शुरुआत में, या बीच में, या अंत में, एक या एक से अधिक लोगों को करना जायज़ है। और अल्लाह ही सामर्थ्य प्रदान करने वाला है।" उद्धरण समाप्त हुआ।

तथा स्थायी समिति (10/161) से : एक ऐसी महिला के बारे में पूछा गया, जो बहुत बूढ़ी है और रमज़ान के महीने का रोज़ा रखने में असमर्थ है। तथा बुढ़ापे और बीमारी की इस अवस्था में उसे तीन साल से अधिक हो गए हैं, तो उसे क्या करना चाहिए ?

तो उसने जवाब दिया :

यदि वस्तुस्थिति ऐसी ही है, जो आपने वर्णन की है, तो उसपर हर उस दिन के बदले जिसका उसने तीन वर्षों के दौरान

रमज़ान में रोज़ा नहीं रखा था, एक गरीब व्यक्ति को खाना खिलाना अनिवार्य है। वह उसे गेहूँ, या खजूर, या चावल, या मकई, या इसी तरह के अन्य भोजन से आधा साअ खिलाएगी, जिसमें से तुम अपने परिवार को खिलाते हो।” उद्धरण समाप्त हुआ।